IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत में बौद्ध दर्शन

Dr. Rupam Kumari
Dept. of Philosophy
(H.O.D)
M. G. College, Ranishwar, Dumka
S. K. M. University, Dumka

Abstract: भारत में दर्शन की एक लम्बी परम्परा है। यहाँ धर्म और दर्शन का गहरा सम्बन्ध हमेशा से रहा है। भारतीय जीवन और धर्म पर दर्शन ने गहरा प्रभाव छोड़ा है। भारतीय दर्शन परंपरा के अधिकांश सम्प्रदाय किसी न किसी धर्म या सम्प्रदाय से जुड रह है। कुछ दर्शनां स तो नये धर्मों का अविर्भाव भी हुआ है। भारत में जीवन की समस्याओं का हल करने क लिए दर्शन का सृजन हुआ है। जब मानव ने अपने आप का दुःखों के चक्रव्यूह में घिरा पाया तब उसने पीड़ा और क्लश से मुक्ति पाने हेतु दर्शन को अपनाया। मैं कौन हूँ ? यह संसार क्या है ? हम सबको उत्पन्न करन वाली वह दिव्य शक्ति कौन है ? इन प्रश्नां और जिज्ञासाओ ं के उत्तर खोजन का कार्य अलग–अलग दार्शनिकों तथा दर्शन सम्प्रदायों ने किया। चाहे फिर वह आस्तिक दर्शन हो या नास्तिक, हिन्दू दर्शन हो या अहिन्दू दर्शन। भारतीय चिन्तन के अन्तर्गत अनेक दर्शनों ने अपना स्थान बनाया। चिन्तन की इस सुदीर्घ यात्रा मं बौद्ध दर्शन का भी विशेष महत्व है।

Keywords: दर्शन, धर्म, चिन्तन, दर्शनशास्त्र, अस्तित्व, निरोध, गौतम बुद्ध, उपादान, सम्यक् , क्षणिकवाद, अनित्यवाद, हीनयान, महायान

Introduction: भारत मे ं दर्शन की एक लम्बी परम्परा है। यहाँ धर्म और दर्शन का गहरा सम्बन्ध हमेशा स रहा है। भारतीय जीवन और धर्म पर दर्शन ने गहरा प्रभाव छोड़ा है। भारतीय दर्शन परंपरा के अधिकांश सम्प्रदाय किसी न किसी धर्म या सम्प्रदाय से जुड रह हैं। कुछ दर्शनां स तो नये धर्मों का आविर्भाव भी हुआ है। भारत में जोवन की समस्याओं का हल करने क लिए दर्शन का सृजन हुआ है। जब मानव ने अपने आप का दुःखों के चक्रव्यूह में घिरा पाया तब उसने पीड़ा और क्लश से मुक्ति पाने हेतु दर्शन को अपनाया। भारतीय दर्शन, मैं कौन हूँ ? यह संसार क्या है ? हम सबको उत्पन्न करन वाली वह दिव्य शक्ति कौन है?,

यहाँ से प्रारम्भ हाती है और इन प्रश्नों और जिज्ञासाओ ं के उत्तर खोजन का कार्य अलग–अलग दार्शनिकों तथा दर्शन सम्प्रदायों ने किया। चाहे फिर वह आस्तिक दर्शन हो या नास्तिक, हिन्दू दर्शन हो या अहिन्दू दर्शन। भारतीय चिन्तन के अन्तर्गत अनेक दर्शनों ने अपना स्थान बनाया। चिन्तन की इस सुदीर्घ यात्रा मं बौद्ध दर्शन का भी विशेष महत्व है।

'दर्शन' शब्द 'दृश' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'जिसके द्वारा देखा जाय'। दर्शन का व्युत्पत्ति–लभ्य अथं है ''दृश्यते अनेन इति दर्शनम''[1] अर्थात जिसके द्वारा देखा जाए वह दर्शन है। यहाँ दर्शन से अभिप्राय सामान्य देखना नही हागा, वरन नेत्र जैसी किसी इन्द्रिय स परे होकर देखने से होता है। दर्शन के साथ शास्त्र शब्द भी जुडा हुआ है। शास्त्र शब्द मुख्यतः दो अथां में प्रयोग होता है। शास्त्र शब्द के बार में आगम ग्रन्थों में बताया गया है––''शासनात् शंसनात् शास्त्र ं शास्त्रमित्यभिधीयते''[2] शास्त्र शब्द की व्युत्पत्ति दा धातुओं से हुई है। 'शास्' अर्थात आज्ञा करना और शंस् – अर्थात प्रकट करना या वर्णन करना। शास्त्र के इन दोनों रूपों से पहले वाला शास्त्र अर्थात शासन करन वाला शास्त्र धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र के लिए उपयुक्त है तो दूसर वाला शास्त्र दर्शन के लिए उपयुक्त है। इस प्रकार जीवन और जगत की समस्त समस्याओं और रहस्यों की व्याख्या दर्शनशास्त्र करता है।

प्लेटो के शब्दों मं – ''दर्शनशास्त्र का उद्देश्य अनन्त तथा वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना है।''[3]

भगवान बुद्ध न अपनी प्रज्ञा और सूक्ष्म विवेक बुद्धी के बल पर चार आर्य सत्यां को प्रस्तुत किया। बुद्ध द्वारा दिए गए सारे उपदेश इन चार आर्य सत्यों में समाहित हो जाते है। इन चारों आर्य सत्यां का संक्षप में विवचन इस प्रकार ह––

1. संसार दुःखों से परिपूर्ण है––बुद्ध द्वारा कहा गया सर्वप्रथम आर्य सत्य है 'दुःख'। यह सारा संसार दुःखमय है। जीवन से अनेक प्रकार के दुःख जुड़े हुए ह जैसे– रोग, बुढ़ापा, मृत्यु, चिंता, असन्तोष, नैराश्य, शोक इत्यादि। इसको स्पष्ट करने हेतु भगवान बुद्ध का कथन दृष्टव्य है – ''जन्म में दुःख है, नाश में दुःख है, रोग दुःखमय है, मृत्यु दुःखमय है, अप्रिय से संयोग दुःखमय है, प्रिय से वियोग दुःखमय है। संक्षेम में रोग से उत्पन्न पंचस्कन्ध दुःखमय है।''[4] बुद्ध ने पंचस्कन्ध के अन्तर्गत शरीर, अनुभूति, प्रत्यक्ष, इच्छा और विचार इन पाँच तत्वों को प्रमुख माना है। कुछ लोगों ने बुद्ध के सारे संसार को दुःखमय कहने का विरोध किया और कहा कि संसार में कुछ सुखमय अनुभूतियाँ होती हैं। इस पर बुद्ध कहते हैं ससार में जिन अनुभूतियों को हम सुखमय समझाते

हैं, वे भी दुःखमय ही ह। सुखात्मक अुनभूतियों को प्राप्त करने में कष्ट प्राप्त होता है और अगर वह वस्तु मिल भी जाए जो सुखात्मक अनुभूति का प्रतिनिधत्व करती है तो उसके खो जाने का भय और चिन्ता मनुष्य को हमेशा लगी रहती है। इस पर भगवान बुद्ध का कथन प्रस्तुत है – ''दुनिया में दुःखियों ने जितने आँसू बहाये हैं उसका पानी महासागर में जितना जल है उससे भी अधिक हैं।''[5] बुद्ध के प्रथम आर्य सत्य को भारत के अधिकांश दार्शनिकों ने स्वीकार किया है। अपवाद रूप में चार्वाक दर्शन सामने आता है जिसने संसार को दुःखों का भंडार कहा है।

2. दुःखों का कारण भी है––भारतीय दर्शन एवं दार्शनिकां की यह विशेषता रही है कि सभी ने संसार का दुःखमय जाना और दुःख के कारणों को खोजन में निरंतर प्रयासरत रहे ह। गौतम बुद्ध न भी इस परंपरा का निर्वाह किया है। बुद्ध के द्सरे आर्य सत्य में एक सिद्धान्त के रूप में दुःखो ं के कारणों को स्पष्ट किया है जिसे 'प्रतीत्यसमुत्पाद' कहा है।

प्रतीत्यसमुत्पाद सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यक विषय या दुःख का कोई न कोई कारण होता है। काई भी घटना अकारण घटित नहीं होती है। बुद्ध ने दुःख को 'जरामरण' कहा है जरा अर्थात वृद्धावस्था और मरण अर्थात मृत्यु है। 'जरामरण' का कारण बुद्ध ने 'जाति' को बताया है। बार–बार जन्म ग्रहण करना जाति है। यदि मनुष्य शरीर नहीं धारण करता तो उसे सांसारिक दुःखों का सामना नही ं करना पड़ता। इस सिद्धान्त के अनुसार जाति का कारण 'भव' है। मानव को जन्म ग्रहण इसलिए लना पड़ता है कि उसकी प्रवृत्ति बार–बार जन्म ग्रहण करने की होती है। अर्थात जन्म ग्रहण करने की प्रवृत्ति को भव कहते हैं। भव का कारण 'उपादान' है। सांसारिक वस्तुओं में आसक्ति को उपादान कहते हैं। 'उपादान' का कारण बुद्ध ने 'तृष्णा' को माना है। शब्द, स्पर्श, रंग इत्यादि विषयों के भोग की वासना को तृष्णा कहते हैं। तष्णा के कारण ही मानव सांसारिक विषयों की ओर अन्धा हाकर भागता है। 'तृष्णा' का कारण 'वदना' है। पूर्व इन्द्रियानुभूति को वदना कहा जाता है। यदि इन्द्रियों का विषयों के साथ सम्पर्क नही ं होगा तो वेदना का उदय नहीं होगा। स्पर्श का कारण बुद्ध ने 'षडायतन' का कहा है। षडायतन का कारण बुद्ध क अनुसार 'नाम–रूप' ह। नाम–रूप का कारण इस सिद्धान्त में विज्ञान को बताया गया है। नवजात शिशु माँ के गर्भ में जब रहता है तो विज्ञान के कारण ही शिशु का शरीर एवं मन विकसित होता है। यदि गर्भावस्था के समय विज्ञान न हो तो यह प्रकिया न घटित हाती। विज्ञान का कारण बुद्ध ने 'संस्कार' को माना है। पूर्व जन्म की प्रवृत्तियो ं के अनुसार ही संस्कार बनते हैं। संस्कार निर्मिती का कारण 'अविद्या' है। जो वस्तु अवास्तविक है उसे वास्तविक समझाना, जो वस्तु दुःखमय है

उसे सुखमय समझाना, अनात्म को आत्म समझाना अविद्या का रूप है। बुद्ध ने अविद्या का समस्त दुःखों का मूल केन्द्र बिन्दु माना है। यह इसलिए की गौतम बुद्ध के दुःखों का चक्र अविद्या पर समाप्त हो जाता है। अविद्या का कारण बुद्ध ने नहीं बताया। यहाँ पर आकर वे मौन हो जाते है ं। बुद्ध ने अविद्या को दुःखों का कारण मानकर भारतीय दर्शन परम्परा का पालन किया है क्योंकि साँख्य, न्या, वैशेषिक, शंकर और जैन दर्शन में यही कारण बताया गया है।

3. दुःखों का अन्त सम्भव है––गौतम बुद्ध द्वारा कहा गया तृतीय आर्य सत्य 'दुःख –निराध' है जिसे निर्वाण भी कहा जाता है। बुद्ध ने द्वितीय आर्य सत्य दुःख का माना है। अतः यह प्रमाणित होता है कि दुःख के कारणों को नष्ट कर दिया जाए ता दुःख का भी अन्त होगा। भारत के अन्य दशनों में जिस प्रकार 'माक्ष' को माना है बौद्ध धर्म में वही स्थान निर्वाण का है। निर्वाण को प्राप्त करना इस जीवन में ही संभव है। यदि व्यक्ति अपने अन्दर समाए राग, द्वेष, मोह, आसक्ति, अहंकार, भय पर विजय पा लता है तो वह मुक्ति पाता है। भगवान बुद्ध को जब बौद्धत्व की प्राप्ति हुई उसके पश्चात व अर्कमण्य न होकर क्रियाशील हुए और समाज जिस दुःख स त्रस्त था उसे उन्हांने अपनी निर्वाण रूपी नैया पर सवार कर इस भवसागर से पार कराने का निर्णय लिया। निर्वाण का अर्थ जीवन का अन्त न होकर जीवन काल में ही एसी स्थिति को प्राप्त करना है जिसमें अमृतमय आनन्द और चिर शान्ति हो। अब इससे यह भ्रांति हो सकती है कि मनुष्य निर्वाण प्राप्त करने के पश्चात भी अगर कर्मों के बन्धन में पड तो वह कर्म संसार का निर्माण करेंग और जन्म–मरण का चक्र पुनः आरम्भ हो जाएगा। परन्तु ऐसा नही है। बुद्ध ने दो प्रकार के कर्म मान है – एक वह कर्म है जो राग, द्वष और मोह से रहित होता है। इस प्रकार क कर्म को आसवत कार्य कहते है जो मानव को बन्धन मं बाँधते हैं। दूसरा कर्म वह है जो राग, द्वेष, और मोह से रहित होता है तथा संसार को अनीत्य समझकर किया जाता है। इससे मनुष्य जन्म–मरण के बन्धन में नही बंधता। बुद्ध निर्वाण के स्वरूप को लकर सदा मौन ही रहे हैं। निर्वाण का अर्थ क्या है इसमें भी विद्वानों में मतभेद है।

4. दुःखों क अन्त का मार्ग है––बुद्धध ने अपने चतुर्थ आर्य सत्य में दुःख निरोध–मार्ग की व्याख्या की है। दुःखों के कारणों का अन्त करने का मार्ग दुःख निरोध–मार्ग है। इसी मार्ग पर चलकर ही बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था। उनके अनुसार दूसरे लोग भी इस मार्ग पर चलकर निर्वाण को प्राप्त कर सकते हैं चाहे फिर वे सन्यासी या गृहस्थ हों । दुःख–निरोध–मार्ग को समझाने के लिए बुद्धने आष्टाँगिक मार्ग की चर्चा की है जिसका संक्षिप्त विवचेन इस प्रकार है––

1.सम्यक् दृष्टि : सम्यक् दृष्टि का अर्थ बुद्ध के चार आर्य सत्यों का ज्ञान प्राप्त करना है। बुद्ध ने दुःख का केन्द्रबिन्दु अविद्या को माना हैा अविद्या के कारण ही मिथ्या दृष्टि का आविर्भाव होता है। मिथ्या दृष्टि की प्रबलता के कारण अवास्तविक वस्तु को वास्तविक समझने लगते हैं। इसी कारण जो नश्वर संसार है उसे अनश्वर, मान बैठते है।

2.सम्यक् संकल्प : बुद्ध के चार आर्य सत्यों को अपने जीवन में उतारना ही सम्यक् संकल्प है। सत्य के ज्ञान, एन्द्रिय विषयों से अलग–अलग रहना, द्वेष और हिंसा के विचारों को त्यागना ही सच्चे साधक को निर्वाण तक पहुँचा सकती है।

3.सम्यक् वाक : कोई भी मानव सम्यक् ज्ञान का पालन तभी कर सकता है जब वह निरन्तर प्रिय व सत्य वचन बोले। अतः कहा गया है ''मन को शन्त रखने वाला एक शब्द हजार निरर्थक शब्दों से श्रेयस्कर है।''[6]

4.सम्यक् कर्मान्त : बुद्ध ने बुरे कर्मों का परित्याग करने का आदेश दिया है। उनके मतानुसार तीन बुरे कर्म ह – हिंसा, अस्तेय और इन्द्रिय याग। अतः बुद्ध ने अहिंसा, दूसरे की सम्पत्ति को न चुराना और इन्द्रिय संयम की शिक्षा दी है।

5.सम्यक् आजीविका : सम्यक् आजीविका से तात्पर्य है जीवन व्यतीत करने के लिए उचित एवं शुभ मार्ग का प्रयोग करना। धोखा, लूट, रिश्वत, अत्याचार जैसे अशुभ मार्ग से आजीविका चलाना पाप है।

6.सम्यक् व्यायाम : सम्यक् व्यायाम में मन नियंत्रण की आवश्यकता है। इसके लिए अपने अंदर से पुराने बुरे विचारों को बाहर निकालना, नये बुरे विचार को मन में आने से रोकना, अच्छे भावों को मन में भरना और इन भावों को मन में सतत क्रियाशील रखना यही चार व्यायाम बुद्ध ने कहे हैं।

7.सम्यक् स्मृति : सम्यक् स्मृति का पालन करना अर्थात तलवार के धार पर चलना है। जिन विषयों का ज्ञान हो चुका है उसे सदैव ध्यान में रखना है। निर्वाण की आशा रखने वाले व्यक्ति ने शरीर को शरीर, मन को मन, और संवेदना को संवेदना समझाना आवश्यक है । अगर ऐसा नहीं समझाा तो वस्तुओं में आसक्ति आ जाएगी और नष्ट होने पर दुःख होगा।

8.सम्यक् समाधिः प्रस्तुत मार्गों पर चलने के बाद निर्वाण चाहने वाला व्यक्ति अपने चित्त स्थायी कर समाधि की अवस्था अपना सकता है। उन्होंने इसकी चार अवस्था मानी है। पहली अवस्था में बुद्ध के चार आर्य सत्यों का मनन–चिन्तन करना है। दूसरी अवस्था में प्रथम अवस्था से संदेह दूर हो जाते हैं। तीसरी अवस्था में आनन्द एवं शान्ति के भाव को त्यागकर शारीरिक आराम का ज्ञान विद्यमान करना है। शारीरिक आराम और शान्ति के

भाव को त्याग कर चौथो अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है। इसमें मनुष्य को 'अर्हत' की संज्ञा प्राप्त होती है और सभी प्रकार के दुःखों का विरोध होकर निर्वाण प्राप्त होता है।

अतः हम देखते है कि यह चार आर्य सत्य बौद्ध दर्शन के मूल केन्द्रबिन्दु है। बौद्ध दर्शन के समस्त सिद्धान्त इन चार आर्य सत्य पर ही किसी न किसी रूप में दिखाई देते हैं।

बौद्ध दर्शन के सम्प्रदाय :बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार भारत और अन्य देशों में हुआ तब सभी जगह इसकी कठोर आलोचना हुई और बौद्ध प्रचारकों से अनेक प्रश्न पूछे गए जिनके उत्तर प्रचारकों को भगवान बुद्ध से भी प्राप्त नहीं हुए। इसलिए प्रचारकों ने धर्म रक्षा और लोगो को अपने धर्म के प्रति आकृष्ट करने के लिए बुद्ध के मतों को परिवर्तित कर दार्शनिक सम्प्रदायों ने जन्म लिया। बौद्ध के विचारों के विपरीत बौद्ध विद्वानों ने दर्शन क्षेत्र में प्रवेश किया और परिणामस्वरूप तीस से अधिक शाखाएँ विकसित हुई। इनमें चार प्रमुख शाखाएँ भारत में मानी जाती हैं।

1. माध्यमिक ––शून्यवाद
2. योगाचार ––विज्ञानवाद
3. सौत्रान्तिक ––बाह्यनुमेयवाद
4. वैभाषिक ––बाह्य प्रत्यक्षवाद

बौद्ध दर्शन के प्रमुख सम्प्रदाय :अन्य धर्मों की तरह बौद्ध धर्म का विभाजन भी सम्प्रदायों में हुआ है। ऐसे सम्प्रदाय मूलतः दो हैं जिनमें 'हीनयान' तथा 'महायान' हैं। 'हीनयान' बौद्ध धर्म का प्राचीनतम रूप रहा है तो 'महायान' उसका विकसित रूप रहा है।

बौद्ध धर्म महात्मा बुद्ध की विचारधाराओं को लेकर चला। एक समय ऐसा था जब संसार में बौद्ध धर्म अपने पैर फैला चुका था। समस्त संसार बौद्ध धर्म की विचारधारा से प्रभावित हुआ और बौद्ध धर्म का विशाल साम्राज्य स्थापित हुआ परन्तु महात्मा बुद्ध के महानिर्वाण के पश्चात बौद्ध धर्म बुद्ध की विचारधाराओं से हटने लगा। आगे चलकर यह अनेक छोटे–छोटे सम्प्रदायों में विभक्त हुआ जैसे हीनयान, महायान, वज्रयान, मंत्रयान। हीनयान अधिक कट्टरता के कारण संकुचित हुआ तो महायान अधिक उदारता के कारण विकृत। बौद्ध धर्म हिन्दू वैदिक धर्म के जिस कर्मकाण्ड के विरोध में खड़ा हुआ था आज वही कर्मकाण्ड बाद्ध में किये जाने लगा। तंत्र–मंत्र और चमत्कार प्रदर्शन के बल पर अज्ञानी जनता को आकर्षित करना, सिद्धि प्राप्ति के लिए गुप्त मंत्रों का जाप यही इनकी साधना बन गई। ''इन सम्प्रदायों में अलौकिक शक्तियों की प्राप्ति और उनका प्रदर्शन ही सिद्ध समझा गया। सिद्धि लाभ के लिए, गुप्त मंत्रों का जाप, आधर विहीन गुप्त क्रियाओं–विशेषकर

निम्न वर्ग की नारियों स भोग आदि को अपनाया गया। इनकी योगिनियों के द्वारा मनुष्य की कामुकता को खूब बढ़ावा मिला । चमत्कार प्रदर्शनार्थ निरीह जनता को ठगने की प्रवृत्ति बढ़ी। धर्म के नाम पर अधर्म का प्रचार हाने लगा।''[7]

भगवान बुद्ध ने कभी आत्मा को नहीं माना परन्तु बौद्ध दर्शन के सम्प्रदायों ने आत्मा तत्व को पूर्ण रूप से स्वीकार किया। ईश्वर या परमात्मा के अस्तित्व को भी बुद्ध ने नकारा था परन्तु कुछ बौद्ध दर्शन सम्प्रदाय भगवान को किसी परमार्थिक सत्ता के रूप में मान्यता मिली। कर्मकाण्ड और मूर्तिपूजा का विरोध होने के बाद भी बौद्ध सम्प्रदायों में इसका प्रचलन अधिक बढ़ा। आगे चलकर शंकराचार्य ने अपने अद्वैतवाद का प्रचार–प्रसार किया। बौद्ध धर्म के विरोध में शंकराचार्य ने अद्वैतवाद का उपदेश इस प्रकार किया कि एक बड़े सम्प्रदय के रूप में इसकी प्रतिष्ठा हुई। बौद्ध धर्म की आचरण पद्धति पर जनता का विश्वास डिग गया और शंकराचार्य के प्रहारों से बौद्ध धर्म की जड़ें तक हिल गई। परिणामस्वरूप जो बौद्ध धर्म भगवान बुद्ध की महान विचारधारा को लेकर चला था वह अपने घर से अपना अस्तित्व खोने लगा। शायद यही सब कारण केन्द्र में रहे हैं भारत में बौद्ध धर्म की असफलता के पीछे।

Conclusion: भगवान बुद्ध द्वारा प्रतिपादित बौद्ध धर्म अपने विराट रूप में भारत और विश्व में फैला। बुद्ध ने अपने ज्ञान से समस्त संसार के दुःखी जनता को दुःख से छुटकारा पाने का रास्ता बताया। जनकल्याण ही उनका परम उद्देश्य था। परन्तु उनके दर्शन में कई ऐसे प्रश्न उपस्थित हुए जिनके उत्तर वे स्वयं नहीं दे पाए। शायद यहाँ उन्होंने मौन रहना ही उचित समझा । आगे चलकर बौद्ध धर्म दर्शन के विवादों में घिरा रहा। परन्तु बौद्ध दर्शन की विचारधारा, आध्यात्मिक पक्ष बड़ा ही उच्चकोटि का है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. आचार्य बलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन, पृ.सं. 3
2. आचार्य बलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन, पृ.सं. 3
3. डॉ. राधाकृष्णन : भारतीय दर्शन, पृ.सं. 38
4. प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपर`खा, पृ.सं. 108
5. प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपर`खा, पृ.सं. 109
6. .प्रो.हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ.सं.118
7. डॉ.शिवकुमार शर्मा, हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, पृ.सं. 36